E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

चंदेरी के प्रतिहार शासक और उनका शासन प्रबंध

श्रीमती आरती शर्मा

शोधार्थी, जीवाजी विश्वविद्यालय

डॉ. जितेन्द्र शर्मा

प्राचार्य, प.श्यामाचरण उपाध्याय महाविद्यालय, मुरैना

Paper Rcevied date

05/05/2025

Paper date Publishing Date

10/05/2025

DOI

https://doi.org/10.5281/zenodo.15571000

IMPACT FACTOR 5.924

Abstract

चंदेरी क्षेत्र के पुरातात्विक सर्वेक्षणों से प्राप्त जानकारी के अनुसार इस क्षेत्र की प्राचीनता पाषाण काल तक जाती है। श्री टी.बी.जी. शास्त्री एवं सी.बी.त्रिवेदी ने भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के अंतर्गत किये शोध कार्यों से इस क्षेत्र की प्राचीनता के विषय में जानकारी मिलती है। किन्तु राजनैतिक इतिहास सम्बंधी जाकारी का अभाव देखने को मिलता है। इतिहासकारों ने प्राचीन 16 जनपदों में वर्णित चेदि जनपद को चंदेरी कहने का प्रयास किया है। ऋग्वेद में वर्णित है कि चेदि देश के निवासियों एवं यहॉ के राजा कसुचेद्य ने ब्रह्मतिथि नामक ऋषि को 100 ऊॅट एवं सहस्त्र गाय देने का उल्लेख है। जबकि प्रो. रैप्सन के अनुसार –''कसुचेद्य को महाभारत में वसु बताया गया है।[1] महाभारत काल का हैहयवंशी प्रसिद्ध राजा शिशुपाल चेदि देश का राजा था। शिशुपाल के वध के पश्चात उसका पुत्र धुष्टकेतु चेदि देश का शासक हुआ। जो महाभारत के युद्ध में अपने पुत्रों सहित मारा गया। इसकी मृत्यु के पश्चात् उसका अनुज शरभ् चेदि देश की गद्दी पर आसीन हुआ। किन्तु इसके पश्चात चेदिवंश की वंशावली का सही–सही अनुमान नहीं लगाया जा सकता।[2]

बौद्ध साहित्य में चेदि जनपद की राजधानी सोत्थिवतीनगर (शुक्तिमतीनगर) बतलाई गई है।[3] चेदि साम्राज्य का विस्तार वर्तमान जबलपुर संभाग तक माना जाता है। इसका प्रमाण कलचुरी राजाओं के अभिलेख हैं, जिनमें त्रिपुरी नगर को कल्चुरी चेदि महाजनपद के राजाओं की राजधानी बताया गया है। साथ में ही इसी को चेदिकुल या चेदियों की नगरी कहा गया है।

छठी शताब्दी ई.पू. चन्देरी क्षेत्र अवन्ति, दशार्ण एवं चेदि जनपदों से आवृत था। यह भू–भाग नन्द मौर्य और शुंग कालीन मगध साम्राज्य का भी अंग रहा। शुंगवंश के बाद निकटवर्ती नागवंश के साम्राज्य का उत्थान हुआ। नागवंशी शासकों के मुख्य राजनैतिक केन्द्र वेसनगर (विदिशा), पवाया (पद्मावती), कोटवाल (कान्तिपुर) कुन्तलपुर थे। धारा नगरी से ग्वालियर तक शक्तिशाली नाग सत्ता का प्रसार था। कालान्तर में गुप्तबंश के प्रतापी सम्राटों ने नागों को नतमस्तक किया। उत्तर कालीन गुप्तों और मौखरियो के विनाश के पश्चात हर्षवर्धन उत्तर भारत का शक्तिशाली व प्रतापी शासक हुआ।[4]

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

मालवा और दिल्ली का प्रवेश द्वार माने जॉने वाले इस नगर का महत्व प्रत्येक काल में रहा है। दिल्ली की गद्दी पर आसीन होने वाले प्रत्येक शासक तथा राजपूत राजाओं के साम्राज्य विस्तार नीति के कारण चन्देरी को अनेक बार युद्ध स्थली बनाया गया। यह नगर अपनी भव्यतानुसार समय–समय पर काल चक्रो के भंवर में फंसकर उन्नति और अवनति के स्वाद चखता रहा।

वर्तमान चन्देरी की स्थापना 10–11वीं शताब्दी के मध्य हुयी। चन्देरी व कदवाया से प्राप्त दो प्रस्तर अभिलेखों से ज्ञात होता है कि चन्देरी, कदवाहा एवं रन्नौद के आस–पास के क्षेत्रों पर प्रतिहार वंश की एक शाखा ने 11वीं से 13वीं शताब्दी तक शासन किया। वर्तमान में यह अभिलेख गूजरी महल, ग्वालियर संग्रहालय में सुरक्षित रखा गया है।

चन्देरी का एक शिलालेख, जो कल्याणराय के मंदिर में प्राप्त हुआ था, उसमें पंचदेव के आर्शीवादात्मक श्लोकों के पश्चात लक्ष्मण जी का वंश प्रतिहार के नाम से प्रसिद्ध होने हेतु बताकर, तेरह प्रतिहार राजाओं में से सातवॉ स्थान **कीर्तीपाल** का बताया गया है। कहा जाता है कि दसवी शताब्दी में इन्होने इस नगर को बसाया।[5] इस शिलालेख में चन्देरी का नाम चन्द्रपुर दिया है। यह शिलालेख संस्कृत में है। राजा कीर्तिपाल ने तीन स्थानों का निर्माण करवाया है और उनका नाम अपने नाम पर कीर्तिदुर्ग, कीर्तिनारायण, और कीर्तिसागर रखा। इसमें पहला प्रमाणिक तौर से चन्देरी का किला है, दूसरा संभवतः विष्णु का मंदिर है, जो कि किले में या किले के आसपास बना हुआ था, जो अब अस्तित्व में नहीं है। तीसरा एक तालाब था जो कि किले के दक्षिण पश्चिम दिशा में था जो कि अब खंडहर स्थिति में है, अभी भी उसका नाम कीर्तिसागर है।[6]

1021ई. में महमूद गजनवी ने मथुरा के पवित्र नगर एवं ग्वालियर के आस–पास लूटपाट की तथा मंदिरों को तोड़ा इसका प्रतिरोध बुन्देलखण्ड के शासकों ने सामूहिक शक्ति के रूप में किया। 1021 ई. में चन्देरी नरेश कीर्तिपाल ने महमूद गजनवी के समक्ष अपनी विवशतावश आत्मसमर्पण कर दिया। इस समय अल्बरूनी ने अपनी पुस्तक ''तहकीक–ए–हिंद'' में चन्देरी क्षेत्र को संस्कृति एवं समृद्धि के क्षेत्र में परिपूर्ण बताया है। मध्य काल में चन्देरी का सबसे पहला उल्लेख अलबरूनी ने ही 1030 ई. में किया था महमूद गजनवी से लेकर मुहम्मद गौरी के समय सन् 1206 में भी इसका स्वतंत्र प्रभुत्व बना रहा।

प्रतिहार शासकों के अभिलेखों से उनके **शासन प्रबंध** के विषय में भी जानकारी मिलती है। हालांकि यह जानकारी प्रतिहारों शासकों की विभिन्न शाखाओं से प्राप्त जानकारी के आधार पर है।

शासन प्रबंध –

राजाः शासन का प्रमुख **राजा** होता था। अभिलेखों में प्रतीहार नरेश के लिए **परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर** की उपाधि का प्रयोग किया गया है। किन्तु प्रतीहार शासक प्रायः स्वयं को महाराजा अथवा महाराजाधिराज ही प्रकट करते थे। नागमट्ट प्रथम को नारायण का प्रतिविम्व कहा गया है। शक्तिशाली और नैतिक गुणों के विनाशक म्लेच्छ राजा (अरवों) की विशाल सेनाओं का दमन करने के कारण उसे यह विरुद प्रदान किया गया था। इसी प्रकार नागभट्ट द्वितीय को आदि पुरुष तथा भोज और उसके पौत्र विनायकपाल को आदिवराह कहा गया है। वत्सराज के लिए रणहस्तिन महेन्द्रपाल प्रथम के लिए निर्भय नरेन्द्र और महीपाल प्रथम के लिए कार्त्तिकेय की पदवी प्रदान की गई। सैनिक शक्ति क्षीण हो जाने पर प्रतीहार नरेश महेन्द्रपाल द्वितीय

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

स्वयं को विदग्ध कहता है। इस प्रकार म्लेच्छों के विनाशक, आर्यावर्त के प्रतीहार नरेश राजनीतिक शक्ति प्रदर्शन के स्थान पर अपनी उपलब्धियों की ओर प्रजा का ध्यान आकर्षित करना आवश्यक समझते थे। धार्मिक क्षेत्र में भी यही दृष्टिकोण अपनाया गया। देवशक्ति वैष्णव था। उसका पुत्र वत्सराज परममाहेश्वर और पौत्र नागभट्ट द्वितीय भगवती का तथा उसका उत्तराधिकारी रामभद्र सूर्य का उपासक था। इस उदार धार्मिक नीति से विदेशी आक्रान्ताओं के विरुद्ध समाज के प्रत्येक सम्प्रदाय की सहानुभूति प्राप्त हुई। प्रतीहार शासकों की धार्मिक सहिष्णुता का भी यह तक अच्छा उदाहरण है, प्रतिहार शासकों ने जैन धर्म को भी प्रश्रय प्रदान किया।

प्रतीहार शासक असीमित शक्ति के स्वामी थे। वे **सामन्तों, प्रान्तीय प्रमुखों और न्यायाधीशों** की नियुक्तियाँ करते थे। निरंकुश होते हुए भी वे प्रजा के सुख–दुख का ध्यान रखते थे। इसका एक प्रमुख कारण यह भी था कि राजा का पद परम्परागत होते हुए भी उसे वृद्ध और अनुभवी मंत्रियों की सलाह मानना आवश्यक था।

आर्थिक अधिकारः प्रशासन, केन्द्रीय सेना, राजपरिवार, सांस्कृतिक तथा धार्मिक गतिविधियों के लिए धन की आवश्यकता होती है। राजा दलदल, ऊसर भूमि, वन, खनिज, लवण, अमराई, मौहार, हांड़ा (जमीन के अन्दर गुप्त धन) इत्यादि का स्वामी होता था। इसके अतिरिक्त राजकीय आदेशों की दस प्रकार की अवहेलनाओं (दशापराध) पर अर्थ दण्ड वसूल किया जाता था। वेगार लेने और सैनिकों को ग्रामीणों के घर ठहराने का अधिकार राजा को था। निःसन्तान मरने वालों की सम्पत्ति राजसात कर ली जाती थी। समय–समय पर राजा लोग कुछ अन्य कर भी लगा देते थे।

समकालीन साहित्य और अभिलेखों से राजा के कर्त्व्यों पर भी प्रकाश पड़ता है। राजा का परम कार्य प्रजा तथा देश की रक्षा करना था। विभिन्न सार्वजनिक समारोहों तथा त्योहारों में सम्मिलित होने की उससे आशा की जाती थी।

युवराजः राजा के पश्चात् युवराज का स्थान था। उसे पंच महाशब्द सामन्त की श्रेणी प्राप्त थी। ज्येष्ठ पुत्र से ही युवराज नियुक्त किया जाता था। सामन्तों की उपस्थिति में उसका राज्याभिषेक करके उसके उत्तराधिकार को सुनिश्चित कर दिया जाता था। युवराज पद के प्रतीक चिन्ह के रूप में एक माला होती थी। युवराज प्रशासन के कार्यों में राजा की मदद करता था। वह दानपत्र जारी कर सकता था।

अग्रमहिषीः राजा की अनेक रानियों में से एक को अग्रमहिषी, महादेवी या पटरानी की उपाधि प्राप्त होती थी। अन्य रानियों से उसका स्थान श्रेष्ठ माना जाता था। राजा की मृत्यु पर युवराज के अल्पायु होने पर वह संरक्षिका के रूप में शासन कर सकती थी।

मंत्रिपरिषद तथा केन्द्रीय शासनः प्रशासनिक कार्यों में राजा को सहायता करने के लिए एक मंत्रिपरिषद होती थी। इसके दो अंग थे **बहिर उपस्थान** तथा **आभ्यन्तर उपस्थान** बहिर उपस्थान में मंत्री, सेनानायक, महाप्रतीहार, महानरेन्द्र, महासामन्त, महापुरोहित, महाकवि, भाट, वैद्य, संगीत–नाट्य शास्त्री, ज्योतिषी, विद्वान, पंडित तथा वेश्या आदि हर प्रकार के श्रेष्ठ जन सम्मिलित थे। किन्तु आभ्यन्तरीय स्थान में राजा के चुने हुए विश्वासपात्र व्यक्ति ही सम्मिलित होते थे। सत्ता इसी सभा में केन्द्रित

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

थी। मंत्रिगण (अमात्य) सर्वाधिक प्रभावशाली होने के कारण दोनों उपस्थानों में सम्मिलित होते थे। राजाज्ञाओं में मंत्रियों की सहमति आवश्यक मानी जाती थी। मंत्रियों का पद आनुवांशिक था। मंत्री को महामंत्री अथवा प्रधानामात्य कहा जाता था।

सांधिविग्रहिक (शान्ति तथा युद्ध का मंत्री) विदेशी नरेशों से पत्र व्यवहार करता था और दानपत्र जारी करता था। विद्रोही सामन्तों को शान्त करना उसी का काम था। अक्षपटलिक **महालेखापाल** को कहते थे। इसका प्रमुख कार्य राज्य की आय–व्यय का हिसाव रखना था। दानपत्रों का पंजीकरण अक्षपटलिक के यहाँ ही होता था। **भाण्डागारिक** राजकोश, आभूषण और राजकीय भण्डारों का अधिकारी था। महाप्रतीहार राजसभाओं में उच्च पद माना जाता था। शक्तिशाली सामन्त भी महाप्रतीहार बनना गौरव की बात समझते थे। राजसभा में शान्ति बनाये रखना, गंभीरता तथा गौरव का आचरण बनाये रखना महाप्रतीहार का कार्य था। महाप्रतीहार के माध्यम से सम्राट के दर्शन होते थे। महापुरोहित सम्राट को आध्यात्मिक विषयों पर परामर्श देता था और उसकी देखरेख, में पूजा, यज्ञ, संस्कार आदि होते थे। इनके अतिरिक्त राजप्रसाद के अधिकारियों/कर्मचारियों में महावैद्य महाभोगिकः नैमित्तिक (ज्योतिषी), बन्दिपुत्र (चारण) अन्तर्वशिक (अन्तःपुर अधिकारी, सहानुक्रधिकृत) आदि का उल्लेख मिलता है।

आय के स्रोतः आय के प्रमुख श्रोतों में राजकीय कर शामिल थे भूमि कर को **उद्रंग,** भाग अथवा दानी कहते थे। इस कर का निर्धारण भूमि के प्रकार अथवा उपज के अनुसार 1/6, 1/8 या 1/12 भाग का होता था। कर की वसूली जिन्स रूप में ही की जाती थी। काश्तकार 1/6 के हिसाब से भूमिकर देते थे। भूमिहीनों को उनकी मजदूरी के रूप में फसल का एक भाग दिया जाता था। करों की नकद अदायगी की राशि को **हिरण्य** कहते थे। राजा अथवा अधिकारियों को फल, शाक, दूध–दही आदि के उपहार को **भोग** कहा जाता था। मंडपिका (चुंगी चौकी) पर वसूली की जाने वाली राशि को दान अथवा शुल्क कहते थे। दशापराधों अथवा अन्य कारणों से वसूल किया जाने वाला जुरमाना **दण्ड** कहलाता था।

सैनिक शासनः महादण्डनायक अथवा महादण्डाधिपति शब्दों से प्रतीत होता है कि यह पद सेनाधिकारी से सम्बन्धित था (वाहिनीपति, सेनानायक, सेनाधिकारी, सैन्यपति)। नवविजित क्षेत्रों में दीवानी (सिविल) के अधिकार भी महादण्डनायक को सौंपे जाते थे। प्रतीहारों के साम्राज्य विस्तार को देखते हुए यह अनुमान करना अनुचित न होगा कि उनके यहां अनेक क्षेत्रीय सेनानायक रहे होंगे। अरव यात्रियों का कथन है कि चारों दिशाओं में चार उपसेनाएं रहती थीं। सेनापति के बाद वलाधिकृत नामक कर्मचारी था। वह नगर की व्यवस्था करता था। महत्तम और कोट्टपाल उसके सहायक थे। मंडपिका में चुंगी बसूली के लिए एक अलग सहायक नियुक्त किया जाता था।

महायुधिपति शस्त्रागार का अधिकारी था। पीलुपति हाथियों का, अश्वपति घुड़सवार सेना का, और पाइक्वाधिपति प्यादों का अध्यक्ष होता था। इस समय तक रथसेना का चलन समाप्त हो गया था, फिर भी यदा–कदा **स्यन्दनपति** का उल्लेख मिलता है। कोट्टपाल कोट (किला) का स्वामी होता था। मुस्लिम युग में इसे कोतवाल कहा जाने लगा। सेना के साथ पुलिस की व्यवस्था भी उसके हाथ में थी। राजा की अनुपस्थिति में राजधानी का काम कोट्टपाल ही देखता था। **मर्यादाधुर्य** अथवा धुरोधिकारी सीमापति होता था। सेना की भरती वंश–परम्परा के आधार पर होती थी। सेना में अधिकांशतः सैनिक क्षत्रिय ही होते थे। सेना

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

में गुप्तचर भी काम करते थे गुप्तचरों का कार्य शत्रुपक्ष का समाचार मात्र लाना न था। उनसे यह आशा की जाती थी कि वे शत्रु में मतभेद उत्पन्न करेंगे, शत्रु के दुर्ग को धोखा देकर जीतने, उनके प्रमुख व्यक्तियों का वध कराने आदि में भी सहायता करेंगे।

सैनिक अस्त्र–शस्त्रः यशस्तिलक चम्पू से ज्ञात होता है कि प्रतीहार सैनिकों के सिर के वाल लटकते हुए और मूंछें बड़ी–बड़ी होती थी। वे घुटनों तक धोती, कमर में भैंसे की सींग से जड़ा हुआ खंजर, दोनों कन्धों पर वाणों के ऊँचे–ऊँचे तरकश, धनुष, भाला और तलवार से सुसज्जित रहते थे। पैदल सैनिक राजपूत सेना की विशेषता थी। अरव यात्रियों ने प्रतीहारों की अश्वसेना की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। सैनिक अभियान के पड़ाव के समय राजा का शिविर मध्य में होता था। उस पर राजा की पताका फहराती रहती थी। वड़े सामन्तों की स्त्रियाँ साथ चलती थीं और वेश्याएं उपस्थित रहती थीं। व्यापारी और **लवाना**[7] लोग सैनिकों की प्रत्येक आवश्यकता की पूर्ति करते थे। प्रतीहार शासकों ने दुर्गों की अच्छी व्यवस्था की थी। मण्डोर, जालोर, गोपदुर्ग (ग्वालियर), तेरही, कालिंजर, कन्नौज और वारी के दुर्ग सुदृढ़ और अत्यन्त महत्वपूर्ण थे। प्रत्येक दुर्ग का एक कोट्टपाल होता था, जो दुर्ग की व्यवस्था करता था।[8]

न्यायालय तथा पुलिस व्यवस्थाः राजा शास्त्रानुसार न्याय करता था। उसका निर्णय अन्तिम होता था। न्यायाधीश राजा की अधीनता में निर्णय करते थे। ग्राम पंचायतें स्थानीय झगड़ों का निपटारा करती थीं। वादी को अपना दावा लिखित में देना पड़ता था। लिखित दावे के अभाव में साक्षियों द्वारा वह अपना पक्ष प्रस्तुत करता था। साक्षी न होने से वादी प्रतिवादी को अपने–अपने पक्ष में सौगन्ध खाने की अनुमति दी जाती थी।[9] कठिन परीक्षाओं जैसे गन्दी वस्तु का पान करने, गहरे पानी में कूदने, आग में कूद कर बच निकलने अथवा गरम लाल लोहे को हाथ से पकड़ने अथवा खौलते हुए तेल में हाथ डालने पर सुरक्षित वच जाने पर अपराधी दोपमुक्त हो जाता था। ब्राह्मण अथवा क्षत्रिय हत्या के दोष से मुक्त थे। उनके लिए प्रायश्चित, सम्पत्ति की जब्ती या देश निकाला की सजा ही काफी समझी जाती थी। चोरी के लिए कभी कठोर सजा, कभी अर्थदण्ड, कभी जनता के समक्ष चोर की मानहानि का व्यवहार किया जाता था। यदि चोरी का माल अधिक मात्रा में होता तव जहाँ अन्य जातियां मृत्युदण्ड की भागीदारी होतीं, वहां ब्राह्मण क्षत्रियों के हाथ–पैर काटने की सजा ही पर्याप्त समझी जाती थी।

उत्तराधिकार कानून में पुत्री को छोड़कर, सम्पत्ति में परिवार की स्त्रियों को हिस्सा नहीं मिलता या। भाई के भाग का चौथाई भाग बहिन को मिलता था, जो उनके विवाह के पश्चात् समाप्त हो जाता था। विधवा को आजीवन भोजन–वस्त्र मात्र मिलता था। वन्दियों का, जीवन दुःखमय था। जेल तो मानों उनके लिए दूसरे नरक के ही समान था। मामले की छानवीन करने वाले अधिकारी को दण्डपाणिक अथवा आरक्षिक कहा जाता था। राजा कानून की जानकारी धर्मशाख–पाठकों अथवा धर्माधिकरणिकों से प्राप्त करता था। सुलेमान यात्री ने लिखा है कि (प्रतीहार काल में) देश लुटेरों से सुरक्षित था। इससे पुलिस की निपुणता तथा दक्षता प्रकट होती है।

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

प्रान्तीय शासनः प्रतीहार साम्राज्य अनेक भागों में विभक्त था। इन भागों को **भुक्ति** कहते थे। यहां राज्यपाल की नियुक्ति की जाती थी राज्यपाल को उपरिक महाराज कहा जाता था। उसकी नियुक्ति सम्राट द्वारा राजपरिवार, सामन्तों अथवा राजकीय अधिकारियों में से की जाती थी। भूमिकर नियत करना इस अधिकारी का काम था। **मण्डल** जिला के बरावर होता था। अभिलेखों में कालंजर, श्रावस्ती, सौराष्ट्र तया कौशाम्बी का उल्लेख मिलने से यह प्रकट होता है कि ये स्थान भुक्ति तथा मण्डल दोनों के ही प्रमुख स्थान थे। विषय आधुनिक तहसील के समान थे। विषय से छोटे पथक ग्रामों के समूह मात्र थे। 84 ग्रामों का समूह चतुरशीतिका और 12 ग्रामों का द्वादशक कहलाता था।

स्थानीय शासनः साहित्य और अभिलेखों से स्थानीय शासन पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। ग्वालियर दुर्ग की व्यवस्था कोट्टपाल तथा वलाधिकृत करते थे। किन्तु नागरिकों के प्रकरण निपटाने के लिए अनेक निर्वाचित अधिकारी थे। सियादोणी के अभिलेख में भुक्ति की राजधानी में पंचकुल तया मंडपिका नामक दो विभागों का उल्लेख मिलता है। इनके अतिरिक्त व्यवसायिक श्रेणियों का बड़ा महत्व था। पंचकुल प्राचीनकाल की पंचायत मात्र थी। प्रतीहारकाल में पंचकुल का शासन व्यवस्था में विशेष स्थान था। पंचकुल समिति में दानपत्रों का पंजीकरण होता था तथा वह न्यायिक कार्य भी करती थी। नागरिकों के झगड़ों का निपटारा करना, व्यापारियों को विक्री के तथा रियायती प्रमाणपत्र देना, धार्मिक तथा साधारण दानपत्र लिखे जाने की सूचना रखना पंचकुल का कार्य था। गांव के महाजनों का प्रतिनिधित्व भी पंचकुल समिति करती थी। चोरी की जांच करने का काम महाजन अथवा करणिक नामक अधिकारी मिलकर करते थे।[10]

विभिन्न व्यवसायों के लिए श्रेणियां होती थी, जो अपने–अपने व्यवसाय सम्वन्धी संगठन रखती थी। उनके द्वारा बनाये गये नियमों के विरुद्ध कार्यवाही करना कठिन था। ग्वालियर के वैल्लमट्टस्वामी अभिलेख में तैलिक (तेली), और मालिका (माली) का पेशा करने वालों की श्रेणी का उल्लेख है। **महत्तक** श्रेणी के मुखिया को कहते थे। अन्य अभिलेखों में सिलावटों, पानवालो, मिठाईवालों. कुम्हारों, कलालों तथा घोड़ों का व्यवसाय करने वालों का उल्लेख मिलता है। व्यापार में वस्तुओं की अदला–वदली प्रचलित थी। मुद्रा का भी चलन था। सवसे अधिक प्रचलित सिक्का द्रम्म था जिसके कई भेद सियादोणी अभिलेख में वर्णित है।

ग्राम शासनः अभिलेखों में ग्रामपति (राजकीय मुखिया), महत्तर (श्रेणी प्रमुख), कुटुम्बिक तथा मध्यग के नाम मिलते हैं। ग्राम की परामर्शदात्री सभा में ग्रामिक महत्तर अथवा महत्तम (महतो) आदि का प्रमुख स्थान था। महत्तर गांव के प्रभावशाली लोग होते थे। इसका प्रमुख कारण उनकी योग्यता, सम्पत्ति अथवा आयु कुछ भी हो सकता था। ग्रामपति ग्रामसभा की सहायता से शासन करता था। ग्राम के झगड़ों का निपटारा करना उसका कार्य था। ग्रामपति को फौजदारी के अधिकार प्राप्त थे। जनकल्याण कार्यों के लिए ग्रामपति राजा तथा प्रजा से अनुदान ले सकता था। गांव की चौकीदारी, अभिलेखों की सुरक्षा इत्यादि की व्यवस्था करना ग्रामपति का कार्य था।

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

प्रतीहार शासक आवागमन के मार्ग व्यवस्थित रखते थे। तालावों, नदियों, और कूपों से पानी चरखे के डोलों द्वारा खींचकर खेतों में पहुँचाया जाता था। इसके लिए शासन उपयुक्त सुविधाएं प्रदान करता था। शासन जन स्वास्थ्य की भी देखभाल करता था। गंदगी फैलाने वालों को उचित दण्ड दिया जाता था।

निष्कर्ष : सामन्ती प्रथा उपयोगी तथा अनुपयोगी दोनों ही थी। मंत्रिपरिषद में सामन्तों का अच्छा प्रतिनिधित्व था और उसी अनुपात से सेना में भी उनका भाग था। प्रदेशों में बड़े–बड़े पद सामन्तों के पास थे। भूमि पर उनका अधिकार पुश्तैनी था और उच्च पद भी उन्हें ही प्राप्त थे। यद्यपि सम्राट तंत्रपालों द्वारा सामन्तों को अधीन रखता था। प्रभुत्व के नाते भी ये सामन्त सम्राट के अनुचर थे और आन्तरिक संकट या वाह्य आक्रमण के समय अपनी–अपनी सेनाएं लेकर उपस्थित होते थे। किन्तु ऐसे सामन्ती तत्त्व प्रायः केन्द्र को वलहीन करते थे। केन्द्रीय सत्ता के निर्वल हो जाने पर प्रायः सामन्त प्रवल हो जाते हैं। अतः स्थानीय कर केन्द्र तक न पहुँचकर स्थानीय सामन्तों के पास ही एकत्र होने लगते हैं। ऐसी परिस्थिति में भी प्रतीहार शासक साम्राज्य को ऐसा शासन प्रदान कर सके, जिसकी प्रशंसा विदेशी यात्रियों ने भी की है। यह तथ्य उनकी राजनीतिक योग्यता और बुद्धिमता की सूचक है। हरिषेण ने एक प्रशस्ति में विनायकपाल को शक्रोपम अर्थात् **इन्द्र के–समान** वताया है। सुलेमान यात्री कहता है कि भोज प्रथम के समय में साम्राज्य सैनिक दृष्टि से सुदृढ़ था और देश लुटेरों से सुरक्षित था। सम्राट का प्रथम कर्तव्य देश, प्रजा और उसकी सम्पत्ति की रक्षा करना था। प्रतीहार शासको ने ऐसे वातावरण में एक विशाल साम्राज्य को छिन्न–भिन्न होने से बचाया इन सम्राटों ने प्रादेशिक राजाओं तथा सामन्तों का सहयोग प्राप्त किया, और लम्बे समय तक इस क्षेत्र पर शासन किया।

संदर्भ सूची –

1. प्रो. रेप्सन फेम्ब्रिज हिस्ट्री खण्ड 1 पृ. 75
2. महाभारत पृ. 2, 31, 42
3. अंगुत्तर निकाय (नालंदा) प्रथम, भाग पृ. 197
4. अंसारी मुजफ्फर अहमद, 'चन्देरी इतिहास और विरासत' सागर एडवटाईजर्स एंड प्रिन्टर्स, वर्ष 2005 पृ. 18
5. डॉ. मजूपुरिया, संजय 'शिवपुरी–नरवर–चन्देरी का दिग्दर्शन' सुधा प्रकाशन वर्ष 1992 पृ.30
6. गर्दे, एम.बी. 'ए गाइट टू चन्देरी' आलीजॉह दरवार प्रेस, ग्वालियर, वर्ष 21 दिसम्बर 1936 पृ.7,8
7. बैल पर सामान लाद कर एक स्थान से दूसरे स्थान ले जाने वाले को लवाना कहा जाता है।
8. धनपाल कृत तिलकमंजरी पृ. 85,148
9. राजस्थान थ्रू द ऐजेज पृ. 343

वही पूर्वोक्त पृ. 708